नागार्जुन की कविता में व्यक्त विद्रोह एवं संघर्ष का स्वर

(द्वितीय वर्ष हिंदी प्रतिष्ठा)

नागार्जुन की कविता समष्टि की कविता है। इनकी कविताओं में देश की सामाजिक राजनीतिक स्थितियों का यथार्थ चित्रण हुआ है। इन्होंने अपनी कविताओं में जनता की अनुभूतियों, विचारों समस्याओं को ज्यों का त्यों चित्रित किया है। देश और समाज की स्थितियों का यथार्थ चित्रण अत्यंत निर्भीक होकर किया है।उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में और बीसवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में भारत में सामन्ती व्यवस्था ने, साम्राज्यवाद के सहयोग से एक शोषण-चक्र चलाया था। इस शोषण-चक्र में पूंजीवाद तथा अफसरशाही को बल मिल रहा था। गरीबों के लिए दो वक्त का भोजन जुटा पाना भी मुश्किल हो गया था। गाँवों तथा शहरों में गरीबों का जीना दूभर हो गया था। गाँवों में जहाँ सामन्ती, सूदखोरी, धार्मिक पाखंड आदि के द्वारा गरीबों का खून चूसा जा रहा था, तो वहीं शहरों में पूंजीवाद के बढ़ते प्रभाव के कारण मजदूर, दमन और शोषण का शिकार थे। किसान और मजदूर शोषण की चक्की में बुरी तरह पिस रहे थे। ऐसी परिस्थिति में मार्क्सवादी चेतना से युक्त साहित्यकारों ने जनता में जागृति लाने के अनेक प्रयत्न किए। राजनीतिक दृष्टि से, महायुद्ध की विभीषिका हमारे सामने थी, जिसने भारतीय जन-मानस को आंदोलित किया। इन्हीं दिनों किसानों और मजदूरों में अपने अधिकारों के प्रति सजगता आई। सन् 1936 ई. के अप्रैल में प्रेमचंद की अध्यक्षता में 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना के लिए लखनऊ में प्रगतिशील लेखक सम्मेलन आयोजित किया गया।

देश की आज़ादी के बाद इलाहाबाद में सितम्बर 1947 ई. में अखिल भारतीय हिन्दी प्रगतिशील लेखक संघ का विशाल अधिवेशन हुआ। इसके घोषणापत्र में स्वाधीनता के लिए प्रसन्नता व्यक्त की गयी तथा जनवादी शक्तियों को मजबूत कर देश की जनता के सांस्कृतिक धरातल को ऊपर उठाने का आग्रह किया गया। प्रगतिशील लेखकसंघ के कार्यों को 'नया साहित्य', 'जन युग' आदि पत्रिकाओं ने प्रकाशित कर उसे आगे बढ़ाने में सहायता दी।

1949 ई. में प्रगतिशील लेखक संघ का एक सम्मेलन इलाहाबाद में हुआ, जिसकी अध्यक्षता नागार्जुन ने की। उन्होंने मजदूरों, शोषितों के लिए लिखे जानेवाले साहित्य पर बल दिया। प्रगतिशील साहित्य-धारा को कई पत्र-पत्रिकाओं का सहयोग मिला। सबसे पहले 'हंस' ने प्रगतिशील लेखक संघ के उद्देश्य, उसके सम्मेलनों की रिपोर्ट आदि प्रकाशित करना आरंभ किया। प्रगतिवादी काव्यधारा मुख्यतः पत्रिकाओं के माध्यम से आगे बढ़ी हैं। 'विप्लव', 'हंस', 'रूपाभ', 'सरस्वती' 'विशाल भारत', 'माधुरी' आदि पत्रिकाओं ने प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से हिन्दी की इस नवीन काव्यधारा को विकसित करने में सहायता की है। शुद्ध खड़ीबोली की परम्परागत रचनाओं को स्थान देनेवाली 'सरस्वती' ने भी सुमित्रानंदन पंत की रचनाएँ प्रकाशित कीं, जो छायावादी रुझान से भिन्न यथार्थ चेतना की वाहिका थीं। इन्हें प्रगतिवाद का प्रथम कवि माना जाता है जबकि इनसे पहले 'सुधा' पत्रिका में निराला की रचना 'वह तोड़ती पत्थर' ने काव्य-चेतना की जागरुकता और यथार्थपरक सूक्ष्म-दृष्टि का परिचय दिया था।

प्रगतिवादी चेतना सामाजिक यथार्थ तथा विश्वराजनीति के समूचे परिप्रेक्ष्य से उत्पन्न हुई थी। यह सामाजिक राजनीतिक चेतना, समाजवादी रूस में 1917 ई. में सम्पन्न हुई सर्वहारा क्रांति और साम्यवाद की तरफ अग्रसर होती हुई एक नयी दुनिया के सुनहरे स्वप्नों से जुड़ी हुई थी। इसके साथ ही भारत की अपनी प्रगतिशील राष्ट्रीय चेतना तथा ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध संघर्षरत भारतीय जनता की आकांक्षाओं के साथ विभिन्न प्रकार के अन्य सामाजिक, राजनीतिक संदर्भ भी जुड़े हुए थे। सन् 1930 से 1947 तक का समय भारतीय इतिहास का सबसे रोमांचक, क्रांतिकारी और उथल-पुथल वाला समय था। इस युग में भारतीय जनता का संघर्ष चरम पर था। रचनाकार भी छायावादी कल्पना-लोक और आनंद से परे यथार्थ जीवन में हो रहे उथल-पुथल के प्रति काफी सजग हो चुके थे। प्रगतिवाद के प्रभाव से वस्तु के धरातल पर काव्य में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। काव्य की वस्तु जहाँ मानवीय संवेदनाओं के एक सीमित दायरे में ही परिक्रमा कर रही थी, अब अनंत संभावनाओं से जुड़ गयी। छायावाद-युगीन कविता के अशरीरी प्रेम की जगह अब यथार्थ-प्रेम ने ले लिया। प्रगतिवादी कवि उन अर्थों में राष्ट्रीय नहीं थे, जिन अर्थों में रामनरेश त्रिपाठी, जयशंकर प्रसाद, सुभद्राकुमारी चौहान, मैथिलीशरण गुप्त और परवर्ती युग में दिनकर थे।

प्रगतिवादी कवि की राष्ट्रीयता, अंतर्राष्ट्रीयता का प्रथम चरण था। वे कोमल निष्क्रिय सौंदर्य-भावना के स्थान पर श्रम के सौंदर्य की प्रतिष्ठा कर रहे थे।

समता की आकांक्षा ने भारतीय समाज में व्याप्त विषमता की ओर भी कवि का ध्यान आकृष्ट किया। वस्तुतः प्रगतिवाद ने ही पहली बार काव्य में यथार्थ को प्रतिष्ठित किया।

नागार्जुन की कविताओं में सर्वत्र जनता की अनुभूति का सजीव चित्रण हुआ है। अधिकांश जनता गरीब और बेबस है। इन्होंने अपनी कविताओं में भूख, गरीबी, शोषण, बेकारी, सांप्रदायिकता, महँगाई जैसी सामाजिक समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया है। उन्होंने स्वयं

अपने जीवन में भी इन समस्याओं का सामना किया था। कवि की राय में आज़ादी से मजदूर-किसानों को कोई लाभ नहीं हुआ है। युवाओं के समक्ष बेकारी की समस्या का भी इन्होंने मार्मिक चित्रण किया है। 'खुरदुरे पैर' कविता में उन्होंने रिक्शा खींचनेवाले मेहनतकश व्यक्ति की पीड़ाओं का चित्रण किया है।

नागार्जुन की कविता में भारतीय भूगोल एवं भारतीय समाज पूरी विविधता एवं व्यापकता के साथ चित्रित है। यहाँ के प्राकृतिक सौंदर्य एवं संस्कृति के विभिन्न पक्षों का भी उन्होंने अत्यंत सजीव चित्रण किया है। उनकी समग्रता-वादी दृष्टि सौंदर्य के साथ-साथ विकृतियों को भी देखती है और अपनी कविता में वे इसकी तीखी आलोचना भी करते हैं। नागार्जुन के काव्य में जनजीवन के हित के प्रति-प्रतिबद्धता दिखाई देती है। नागार्जुन जन आंदोलन पर कविता लिखते हुए अत्यंत भावावेग के क्षणों में भी कविता के रूप और सौंदर्य को बनाए रखते हैं। कविता के भाव और शिल्प के मध्य की सहजता, एवं विषय एवं कार्यकला के प्रति सजगता उन्हें लोकप्रिय कवि बनाती है। 1955 के छात्र आंदोलन में बिहार के नवादा में पुलिस की गोली से दो छात्र मारे गए। इस घटना का चित्रण उन्होंने इस प्रकार किया है—

पीच रोड पर

धूसर दाग लहू के देख

बेदम बूढ़े हाथी की खुरदुरी पीठ पर

मसल गया हो कोई ज्यों सूखा-सूखा सिंदूर।

गोली लगी

गिरा धरती पर

यहीं महेन्दर

देश-हित के विरोध में घटने वाली घटनाओं का इन्होंने सदैव विरोध किया है। ये देश के विकास, शांति और अमन के लिए सदैव तत्पर रहे हैं। समाज में व्याप्त राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक सभी प्रकार की विषमताओं का इन्होंने विरोध किया है। सरकार तथा पूंजीवादियों द्वारा हो रहे अत्याचार, अन्याय एवं शोषण के प्रति इन्होंने विद्रोह प्रकट किया है। देश में बढ़ती हिंसावृत्ति, नेताओं द्वारा जनता को छलना, मेहनत-मजदूरी करनेवालों के साथ होनेवाले अत्याचार आदि से वे अनेकानेक बार आहत होते हैं। भारत को आज़ादी मिली, लेकिन जनता को जीवित रहने के लिए बुनियादी सुविधाएँ भी प्राप्त नहीं हुईं। भ्रष्टाचार, पाखंड, सत्ता लोलुपता के प्रति उनका विद्रोह व्यंग्य के रूप में प्रकट हुआ है।—

"आओ रानी हम ढोएँगे पालकी

रफू करेंगे फटे पुराने जाल की

यही हुई है राय जवाहर लाल की।”

कवि को पंचवर्षीय योजनाएं दुखी-पीड़ित जनता के दुख को और अधिक बढ़ाने वाली प्रतीत होती हैं। -

बताऊँ ?

कैसी लगती है-

पंचवर्षीय योजना

हिडिंबा की हिचकी, सुरसा की जंभाई।

शासन के दमनतंत्र ने किस प्रकार जनता को झूठे आश्वासन दे-देकर उसे गरीबी, बेरोज़गारी, बेकारी, अशिक्षा और बीमारी में जीने को विवश किया है नागार्जुन इसे भली-भाँति जानते हैं। इन्होंने पूंजीवादी व्यवस्था, तानाशाही, सरकार की दमनकारी नीति के विरोध में विद्रोह प्रकट कर निरंतर संघर्ष की भावना को मुखरित किया है। इन्होंने आम जनता पर होने वाले अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठाई है। नागार्जुन शोषण को जड़ से मिटाना चाहते हैं और क्रांति का उद्घोष करते हैं।

भारत में 1975 में लगाए गए आपातकाल से भी कवि अत्यंत आहत हुए। आपातकाल के दौरान, पूंजीवादी तथा सरकार विरोधी सभी ताकतों जैसे- विद्रोही, नक्सलवादी, विरोधी दल के नेता, क्रांतिकारी, आंदोलनकारियों आदि को बंदी बनाया गया। उनकी स्वतंत्रता पर पाबंदी लगाई गयी। सरकार ने दमन एवं शोषण का मार्ग अपनाया। जयप्रकाश नारायण और उनके संपूर्ण क्रांति आंदोलन पर पाबंदी लगाई गयी। नेता, साहित्यकार तथा आंदोलनकारियों के साथ बर्बरतापूर्ण व्यवहार किया गया। उन्हें अनेक प्रकार की यातनाएं दी गईं। ऐसे में नागार्जुन ने लिखा-

“लगता है

हिन्द के आसमान में

सूरज पर भी लागू होंगे

आपातकालीन स्थिति वाले आर्डिनेंस”

आपातकाल में शासन एवं व्यवस्था के विरोध में कुछ भी लिखना और लिखकर छपवाना अत्यंत कठिन था। लेकिन नागार्जुन ने इस कठिन काम को अंजाम दिया। -

“मोटे सलाखों वाली काली दीवार के उस पार

लट्ठधारी साधारण पुलिस मैन नहीं हैं

.....नारकीय यंत्रणा देकर

तथाकथित अभियोग कबूल करवाने वाले

एलेक्ट्रिक कंडक्टर है।”

नागार्जुन ने नारी की दयनीय, शोषित तथा पीड़ित अवस्था का चित्रण किया है। वे नारी को गरिमा तथा गौरव प्रदान करते हैं। नारी की मुक्ति की बात करते हैं। सदा के लिए नारी को अत्याचारों से मुक्ति दिलाना चाहते हैं। आम आदमी, सर्वहारा वर्ग एवं नारियों का सदैव शोषण होता रहा है। कवि इन पर होने वाले शोषण का विरोध करते हैं।

जनता का जीवन जिन भीषण कठिनाइयों से गुजर रहा है, नागार्जुन ने उसका अत्यंत सजीव चित्रण किया है। सारे देश में भुखमरी, अकाल, बाढ़, महामारी, महँगाई और बेकारी का प्रकोप है। 'अकाल और उसके बाद' कविता में उन्होंने देश के दुर्भिक्ष और अकाल का चित्रण मानवेतर पात्रों के माध्यम से किया है। -

"कई दिनों तक चूल्हा रोया चक्की रही उदास

कई दिनों तक कानी कुतिया सोइ उनके पास

कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त

कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त"

नागार्जुन बहुमुखी प्रतिभासंपन्न रचनाकार हैं। साहित्य के क्षेत्र में उनका अपना दृष्टिकोण है। उनकी दृष्टि में कविता के प्रतिपादन से अधिक उसका प्रतिपाद्य महत्वपूर्ण है। वे शिल्प-सौंदर्य से अधिक भाव को प्रमुखता देते हैं। इन पर प्राचीन एवं नवीन अनेक साहित्यकारों जैसे- कालिदास, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, विद्यापति, जयदेव, कबीर, तुलसी, भारतेंदु हरिश्चंद्र, निराला, प्रेमचन्द, राजकमल चौधरी आदि का प्रभाव पड़ा। विद्वान आलोचक डॉ. प्रकाशचन्द्र भट्ट के शब्दों में, "नागार्जुन का हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। प्रेमचंद- सी भारतीय कृषक मजदूर वर्ग के प्रति आत्मीयता, निराला-सा फक्कड़पन और अक्खड़पन तथा बातों पर कबीर सी फटकार- सबका मिला-जुला रूप ही नागार्जुन के व्यक्तित्व का आधार है।"[1]

नागार्जुन के काव्य का क्षेत्र अत्यंत विशाल है। शीत, ताप, धूप, ओस, हिमपात जैसी प्राकृतिक स्थितियों से लेकर राग, द्वेष, क्रोध, घृणा, हर्ष, शोक, उमंग, आक्रोश, निश्चय, संशय, क्रम, व्यतिक्रम, निष्ठा, अनिष्ठा, आस्था, अनास्था जैसे विभिन्न मानवीय भावों तथा जीवन, मृत्यु, उत्थान, पतन जैसी विभिन्न स्थितियों का चित्रण उनकी कविता में हुआ है। नागार्जुन की कविता सिर्फ पृथ्वी की ही नहीं है, वह पाताल, ग्रह- उपग्रह तक भी फैली हुई है :

संबद्ध हूँ, जी हां संबद्ध हूँ....

पृथ्वी-पाताल से, ग्रह- उपग्रह से, नीहारिका-जल से

रिक्त से, शून्य से, व्याप्ति-अव्याप्ति-महाव्याप्ति से।

वैयक्तिक जीवन के संघर्षों ने भी नागार्जुन को विद्रोही बना दिया। इन संघर्षों के कारण भी वे शोषितों की पीड़ा को अधिक गहराई से अनुभव कर सके। गरीबी और उत्पीड़न के होते हुए भी वे बसंत की अगवानी का सपना देखते हैं। उनका मानना है कि कल यहाँ ऐसे समाज का निर्माण होगा जहाँ लोग स्वार्थहीन होकर समता को सही मायने में स्थापित करेंगे-

सबके दुख में दुखी रहेगा/ सबके सुख में सुख मानेगा

समझ-बूझकर ही समता का/ असली मुद्दा पहचानेगा।

(हरिजन-गाथा)

नागार्जुन घुमक्कड़ यायावर प्रकृति के कवि थे। भ्रमण करते हुए जहाँ कहीं उन्हें नया ज्ञान मिलता था या कोई जानकारी प्राप्त होती थी वहीं पर वे अपना लेखन आरंभ कर देते थे। कविता लिखकर स्वयं घूम- घूम कर बेचा करते थे तथा उनका प्रचार करते थे। सभाओं, संगोष्ठियों में अपनी कविताएँ सुनते थे।

अजय तिवारी के शब्दों में, " वे (नागार्जुन) यायावर हैं, उनकी कुटिया यह संसार ही है। उनका मानववाद उनकी क्रांतिकारी आस्था से दीप्त है। निराशावाद के लिए उसमें स्थान नहीं है।"[2]

उनके काव्य में, सामाजिक एवं राजनीतिक प्रश्नों पर उनके विचार साम्यवादी सिद्धांतों के अनुरूप व्यक्त हुए हैं। कवि स्वयं

सर्वहारा हैं-

पैदा हुआ था मैं

दीन-हीन अपठित किसी कृषक कुल में

आ रहा हूँ पीता अभाव का आसव ठेठ बचपन से

कवि ! मैं रूपक हूँ दबी हुई दूब का

जीवन गुजरता प्रतिपल संघर्ष में

मेरा क्षुद्र व्यक्तित्व

रुद्ध है, सीमित है

आटा, दाल, नमक, लकड़ी के जुगाड़ में.....

नागार्जुन समाजवादी जीवन-दर्शन के समर्थक हैं, उनकी कविता का कथ्य शोषित, दुख में डूबी जनता का यथार्थ चित्रण है इसके साथ ही स्वयं भीषण परिस्थितियों से गुजरकर होने वाली अनुभूति का भी अंकन है। मानव जीवन के चित्रण में शहर की अपेक्षा गाँव ने उन्हें अधिक आकर्षित किया है।

बेकारी, भुखमरी, अकाल आदि के दृश्य इनकी कविताओं में चित्रित हुए हें। आज़ादी के बाद भारत में पंचवर्षीय योजनाएं बनी हैं। किन्तु इन योजनाओं से देश के करोड़ों शोषितों को कोई लाभ नहीं मिला।

श्री आनंद प्रकाश दीक्षित ने भी लिखा है, "असल में नागार्जुन की कविताओं में जीवन की ऊष्मा है और उनकी कविताओं में प्राण भरती है आस्था और उनका विश्वास।"[3]

नागार्जुन ने कविता को वैयक्तिक दायरे से बाहर निकालकर उसे सामाजिक भूमिका प्रदान की। यही कारण है कि उनकी कविताओं में अकेलापन, अलगावबोध, अजनबीपन, व्यर्थताबोध आदि का अभाव है। नागार्जुन कि पीड़ा सिर्फ उनकी अपनी पीड़ा नहीं है, वह करोड़ों जनता की पीड़ा है। उन्होंने करोड़ों पीड़ित जनता का साथ दिया है। उनका मानना है कि करोड़ों जनता पीड़ित हैं, और मैं भी उन्हीं में से एक हूँ.....

मैं न अकेला, कोटि-कोटि हैं, मुझ जैसे तो

सबको ही अपना-अपना दुख वैसे तो

पर दुनिया को नरक नहीं रहने देंगे हम

कर परास्त छलियों को, अमृत छीनेंगे हम।

(पुरानी जूतियों का कोरस)

उनके कवि-कर्म का लक्ष्य यह रहा है कि समाज को शोषण, छल, गरीबी आदि से भरा हुआ नरक नहीं होने देना और समाज को समता का अमृत प्रदान करना। इसके लिए वे पद- दलित श्रमिक वर्ग का साथ देना चाहते हैं। उनकी कविता के नायक भी यही उपेक्षित श्रमिक लोग हैं। डॉ. विजयबहादुर सिंह के अनुसार, "नागार्जुन के यहाँ निम्न वर्ग या सचमुच का सर्वहारा वर्ग कविता का नायक है। रिक्शा खींचने वाला, चटकल में काम करने वाला मजदूर, उच्च वर्ग का पुश्तैनी शिकार हरिजन और मछुआरा और महिला वर्ग जो वर्षों नहीं, शताब्दियों से भारतीय समाज की गुलामी करने को विवश है, नागार्जुन के चरित्र नायक हैं।"[4]

नागार्जुन के संबंध में संस्कृत की पुरानी उक्ति 'वज्रादपि कठोराणि, मृदुनि कुसुमादपि' पूर्णतः सटीक है। इनकी कविता में एक तरफ शिशु की दंतुरित मुस्कान है तो दूसरी तरफ 'एटम का भीषणतम महानाश'। रिक्शेवाले के बिवाइयों से फटे पैर और नखरंजनी आधुनिकाओं की तिकोने नाखूनों वाली अंगुलियाँ, उनकी कविता में समान रूप से स्थान पाते हैं। कहीं ये अपनी तेजस्वी वाणी से युवकों को संबोधित करते दिखाई देते हैं, तो कहीं किसी एकांत में किसी सिंदूर तिलकित भाल की याद में डूबे हुए। कहीं रेलवे के पुल के पास गुजरती हुई ट्रेन से गंगा मैया में फेंकी जाती इक्कन्नी –दुअन्नियों का दृश्य देखने के लिए नागार्जुन खड़े हो जाते हैं, तो कहीं युद्धभूमि में, मंत्रियों, प्राचार्यों और स्वप्नदर्शी ,कोमलमना कवियों पर व्यंग्य-बाणों की वर्षा करने में भी पूरी शक्ति खर्च करते हैं।

नागार्जुन की अनेक कविताएँ अपने बिल्कुल निजी जीवन से संबंधित हैं। जैसे- 'क्या अजीब नेचर पाया है' या 'ओ जन-मन के सजग चितेरे' या 'सिंदूर तिलकित भाल'। इस प्रकार की कविताओं में नागार्जुन की कोमल, भावप्रवण, संवेदनशील अनुभूतियाँ व्यक्त हुई हैं।

नागार्जुन बड़े आस्थावान कवि हैं। व्यक्तिगत दुखों और शोषणों ने उन्हे कड़ुआ कहने पर विबश किया हो, किन्तु वे कुंठित और निराशावादी नहीं हुए। इनकी अभिव्यक्ति शैली सरल-सहज एवं स्पष्ट है। नए-नए विशेषणों का निर्माण करने में इन्होंने अपनी मौलिक प्रतिभा का प्रभावपूर्ण परिचय दिया है।

शिवदान सिंह चौहान नागार्जुन को कम 'क्लासिक प्रगतिशील' कवि मानते हैं। नागार्जुन की कथा और कविता, सौंदर्य और यथार्थ –सभी एक दूसरे के पूरक और हिस्सेदार रहे हैं। व्यवहार से ही,भाषा और काव्य का बोध नागार्जुन ने सीखा था। समता की आकांक्षा ने भारतीय समाज में व्याप्त विषमता की ओर भी कवि का ध्यान आकृष्ट किया। वस्तुतः प्रगतिवाद ने ही पहली बार काव्य में यथार्थ को प्रतिष्ठित किया।

नागार्जुन की कविताओं में सर्वत्र जनता की अनुभूति का सजीव चित्रण हुआ है। अधिकांश जनता गरीब और बेबस है। इन्होंने अपनी कविताओं में भूख, गरीबी, शोषण, बेकारी, सांप्रदायिकता, महँगाई जैसी सामाजिक समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया है। उन्होंने स्वयं अपने जीवन में भी इन समस्याओं का सामना किया था। कवि की राय में आज़ादी से मजदूर-किसानों को कोई लाभ नहीं हुआ है। युवाओं के समक्ष बेकारी की समस्या का भी इन्होंने मार्मिक चित्रण किया है। 'खुरदुरे पैर' कविता में उन्होंने रिक्शा खींचनेवाले मेहनतकश व्यक्ति की पीड़ाओं का चित्रण किया है।

नागार्जुन की कविता में देश एवं समाज की समसामयिक स्थितियों, गतिविधियों का चित्रण है।उनकी कविताओं में व्यंग्य, विद्रोह तथा सहानुभूति है। वे सामाजिक तथा राजनीतिक गतिविधियों के प्रति सचेत हैं। वे श्रम की महत्ता को स्वीकार करते हैं, शोषितों के प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हैं। उन्हें सामन्ती वर्ग के वैभव प्रदर्शन, ढोंग एवं पाखंड पर क्रोध आता है। अनेक स्थानों पर उन्होंने सामन्ती वर्ग द्वारा सर्वहारा के शोषण की अभिव्यक्ति की है।

-डॉ. बिभा कुमारी (प्रवक्ता(तदर्थ)आई पी कॉलेज फॉर वुमेन दिल्ली विश्वविद्यालय)

संदर्भ-सूची

1. डॉ. प्रकाशचन्द्र भट्ट, नागार्जुन: जीवन और साहित्य, पृ. 40

2. अजय तिवारी, नागार्जुन की कविता,पृ. 28

3. सुरेशचन्द्र त्यागी, नागार्जुन, आनंदप्रकाश दीक्षित, हजार हजार बाँहों वाली, पृ. 178

4. सुरेशचन्द्र त्यागी, नागार्जुन, विजय बहादुर सिंह: सामान्य जन के महाकवि, पृ. 110-111